श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका

मार्च २०२२

वर्ष : ९४ श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर अंक: ३

www.krishnapranami.org

RNI NO. GUJBIL/2006/18311, Postal Reg.No.Jam/GJN-1/2020-21
Validity : Upto 31-12-2023, Date of Publication : 10th of Every Month, Date of Posting : 16th of Every Month
Subscription : Annual Rs.150/-, 15 Years Rs.1500/- , No. of Pages : 36

प्रणामी ग्लोबल स्कूलमें सुप्रसिद्ध नाडीवैद्य डॉ. राजेश वर्माका
विद्यार्थियोंको आयुर्वेदिक जीवन शैलीका मार्गदर्शन ।

श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका

संस्थापक : ब्रह्मलीन आचार्य श्री १०८ धनीदासजी महाराज

वि . सं : २०७८ | निजानन्दाब्द : ४४० | बुद्धजी शाका : ३४३

वर्ष : ९४ | मार्च २०२२ | अंक : ०३

मुद्रक, प्रकाशक एवं स्वामित्व } जगद्गुरु आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज

मुद्रण एवं प्रकाशन स्थल } श्री ५ नवतनपुरी धाम खीजड़ा मन्दिर जामनगर - ३६१ ००१ (गुजरात) भारत

सम्पादक : स्वामी श्री लक्ष्मणदेवजी महाराज
श्री कनकराय व्यास

पता : श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका, श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर 361 001

फोन : (0288) 267 2829 मो : 08511226600

E-mail : patrika@krishnapranami.org / navtanpuri@gmail.com

Website : www.krishnapranami.org / patrika

श्री बाईजीराज प्राकट्य महोत्सव

सुन्दरसाथजी ! आप सभीको विदित ही है कि चैत्री पूर्णिमा श्री बाईजीराजजीका प्राकट्य दिन है । यह पवित्र दिन इस बार दिनांक १६-०४-२०२२ को है । इस दिन श्रीकृष्ण प्रणामी मन्दिरोंमें उत्सव मनाया जाता है । महामति श्री प्राणनाथजीके कदमों पर कदम मिलाकर श्री बाईजीराज महारानीने शरदी, गरमी, भूख प्यासादि कठिनाइयोंकी परवाह किये बिना जागनी यात्रामें महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था । सुन्दरसाथकी सोई हुई चेतनाको जागृत कर परमानन्द प्राप्तिके लिए निरन्तर प्रेरित करनेवाली श्री बाईजी महारानीके चरणोंमें शत् शत् प्रणाम ।

उनकी प्राकट्यस्थली धोराजीमें इसबार प्राकट्य महोत्सव दिनांक १५ अप्रैलसे १७ अप्रैल २०२२ पर्यन्त धूमधामसे मनाया जायेगा ।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म

(संक्षिप्त परिचय)

अनन्तश्री विभूषित जगद्गुरु आचार्यश्री कृष्णमणिजी महाराज

(गतांक पृष्ठ १३ से आगे.....)

जगत अर्थात् माया : जगतको ही माया कहा है । असत्य, झूठ अथवा मिथ्याको सत्यके रूपमें प्रकट करनेवाली शक्ति माया कहलाती है ।

मूलतः पूर्णब्रह्म परमात्माके द्वारा ही यह प्रकट होती है किन्तु उसका सञ्चालन अक्षरब्रह्मके द्वारा होता है । अक्षरब्रह्म द्वारा सञ्चालित मायाको कालमाया कहते हैं । किसी विशेष प्रसंग पर स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मा इसका सञ्चालन करते हैं । उस समय यह योगमाया कहलाती है । जब पूर्णब्रह्म परमात्माने नश्वर जगतमें रासलीला की तब मायाका सञ्चालन उन्होंने स्वयं किया । इसलिए उस मायाको योगमाया कहा और उसके द्वारा बने हुए ब्रह्माण्डको योगमायाका ब्रह्माण्ड कहा गया । रास लीलामें लीलाभूमि, वन, उपवन, नदी, पर्वत आदिसे लेकर श्री श्यामाजी एवं ब्रह्मात्माओंके शरीर, शृंगार, वस्त्र आभूषण आदि सभी योगमाया द्वारा निर्मित हैं । योगमायाकी सृष्टिमें कालमायाकी सृष्टिकी भाँति परिवर्तन नहीं होता है । सभी वस्तुयें जैसीकी तैसी बनी रहती हैं ।

अक्षरब्रह्म जब सृष्टि रचनाका संकल्प करते हैं तब उनसे मोह प्रकट होता है । वे इसीके द्वारा संकल्प मात्रसे अंसख्य ब्रह्माण्डोंको बनाते हैं, टिकाते हैं और मिटाते हैं । प्रत्येक ब्रह्माण्डमें जब उनका मन प्रवेश करता है तब वह भगवान नारायणके रूपमें प्रकट होता है । भगवान नारायण जब एकसे अनेक होनेका संकल्प करते हैं **(एकोऽहं बहुस्याम प्रजायेयम्)** तब वे स्वयं ब्रह्मा, विष्णु एवं महेशके रूपमें प्रकट होते हैं । विभिन्न देवी देवतायें भी इनसे ही प्रकट होती हैं । देवी देवताओंसे लेकर भगवान नारायण पर्यन्त सभी विभूतियाँ परमात्माके क्षर स्वरूपमें आती हैं । वे सभी ब्रह्माण्डके शासक हैं ।

अक्षरब्रह्म अपने चतुर्थपाद अव्याकृत अक्षरके अन्तर्गत स्थित प्रणव ब्रह्मके द्वारा चेतनाओंको प्रकट कर विभिन्न ब्रह्माण्डोंमें भेजते हैं । इन चेतनाओंको जीव सृष्टि कहा गया है । ये नश्वर जगतकी सृष्टिको आगे बढ़ाते हैं । इस प्रकार ब्रह्माण्डका नाटक अथवा खेल चलता है । माया इस मिथ्या खेलको भी सत्यवत् भासित करवाती है । इस मिथ्या प्रपंच अथवा नाटकको दिखानेके लिए पूर्णब्रह्म परमात्मा अपनी आत्माओंको भेजते हैं और उनके सहयोगके लिए अक्षरब्रह्म भी ईश्वरीसृष्टिको भेजते हैं ।

अखण्ड धामकी आत्मायें भी मिथ्या जगतके खेलमें स्वयंको भूल जाती हैं और जीवसृष्टि भी मायाके चक्रमें ही जन्म मृत्यु जरा व्यधिसे ग्रस्त रहकर चौरासी लाख योनियोंमें भटकती हैं । उनमें अच्छे कर्म करनेवाली आत्मायें ब्रह्माण्डके अन्तर्गत स्थित चौदह लोकोंमें कर्मानुसार भ्रमण करती हैं । यदि उनको मनुष्य जीवनमें अखण्ड भूमिकाका ज्ञान प्राप्त होता है तब वे आवागमनके चक्रसे मुक्त हो जाती हैं ।

मुक्ति : जब आत्मायें मायाके चक्रसे छुटकर अपने मूलमें पहुँचती हैं उसीको मुक्ति कहा है । इसके लिए उनको ज्ञानकी आवश्यकता होती है । सृष्टिके आदिकालसे ही जगतमें समय समय पर ज्ञान प्रकट होता गया जिसके द्वारा जन्ममृत्युके चक्रसे हटकर ब्रह्माण्डको पार करनेका मार्ग प्रशस्त हुआ ।

जब ब्रह्मात्मायें नश्वर जगतका खेल देखनेके लिए आती हैं । उनके साथ तारतम ज्ञान एवं प्रेमलक्षणा भक्ति भी प्रकट होते हैं । तारतम ज्ञानके द्वारा जीवसृष्टिको मुक्तिका मार्ग प्राप्त होता हैं एवं ब्रह्मात्मायें तथा ईश्वरीसृष्टि अपने अपने धाममें जागृत होंगी । नश्वर जगतका खेल देखते हुए भी वे परमधाममें जागृतिका अनुभव करें एवं पूर्णब्रह्म परमात्माके सान्निध्यका अनुभव करें इसके लिए प्रेमलक्षणा भक्तिका उपदेश हुआ है ।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें तारतम ज्ञान एवं प्रेमलक्षणा भक्तिका विशेष महत्त्व बताया गया है । तारतम ज्ञानके द्वारा आत्मा, परमात्मा एवं परमधामकी

पहचान होती है और प्रेमलक्षणा भक्तिके द्वारा उनका अनुभव होता है। तारतम ज्ञान यथार्थ ज्ञान है। जगतकी नश्वरता, पातालसे सतलोक पर्यन्तकी परिवर्तनशीलता सहित समग्र क्षर ब्रह्माण्डकी जानकारीके साथ-साथ अविनाशी ब्रह्मधामका तारतम्य यथार्थ रूपमें समझानेके कारण इसे तारतम ज्ञान कहा गया है।

तारतम्य ज्ञान एवं प्रेमलक्षणा भक्ति : धर्मप्राण सुन्दरसाथजी ! हम जिस पृथ्वीमें रह रहे हैं उसे शास्त्रोमें पृथ्वीलोक, भूलोक, मृत्युलोक आदि नाम दिये हैं। प्रत्येक नामकी अपनी अपनी विशेषतायें हैं। यह मृत्युलोक ब्रह्माण्डके अन्तर्गत विद्यमान चौदह लोकोंमेंसे एक है। इन चौदह लोकोंमें मृत्युलोकसे निम्नकक्षाके सात लोक हैं जिनको सात पाताल कहा गया है और इससे उच्चकक्षाके अन्य छः लोक हैं जिनको स्वर्ग आदि लोक कहते हैं। उक्त छः लोकोंमें भौतिक सुखोंसे सम्पन्न लोकके रूपमें स्वर्ग लोक प्रसिद्ध है। इसलिए पृथ्वीमें भी सुख सुविधा सम्पन्न स्थान हो तो उसे पृथ्वीका स्वर्ग कहते हैं। स्वर्गसे भी श्रेष्ठ सुख वैकुण्ठके कहलाते हैं। जो जीव वैकुण्ठ लोकको प्राप्त करते हैं वे वहाँपर अनेक वर्ष पर्यन्त रहकर अनेक प्रकारके सुख प्राप्त करते हैं। नैमित्तिक प्रलयमें स्वर्ग पर्यन्तके दस लोक नाश होते हैं। उस समय भी वैकुण्ठ लोक यथावत रहता है। इसलिए वैकुण्ठको मुक्तिका स्थान भी माना जाता है। वास्तवमें वैकुण्ठकी मुक्ति अस्थायी कहलती है क्योंकि प्राकृतिक प्रलयमें यह सम्पूर्ण प्राकृत जगत लय हो जाता है उस समय ये चौदह लोक भी लयको प्राप्त होते हैं। सामान्य लोगोंको इतनी लम्बी अवधिका ख्याल नहीं होता है इसलिए वे वैकुण्ठको मुक्ति स्थल मानते हैं। यथार्थतः चौदहलोक युक्त यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही महाप्रलयमें लयको प्राप्त होता है उस समय चौदह लोक, उनको आवृत्त किए हुए आठ प्रकारके आवरण, ज्योति स्वरूप, गायत्री सहित शून्य, निराकार, निरञ्जन, महाशून्य आदि किसी भी स्थानका अस्तित्त्व नहीं रहता है। यहाँ तक कि स्वयं भगवान नारायण भी अपने मूल स्वरूप अव्याकृत अक्षरमें समा जाते हैं। इस प्रकार समय आनेपर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही नाश हो जाता

है । इसलिए इस ब्रह्माण्डको नाशवान्, क्षणभङ्गुर, क्षर कहा गया है । जब सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही क्षर कहलाता है तो इसके अन्तर्गत आनेवाले सभी देव भी क्षर कहलाते हैं । इस प्रकार ब्रह्माण्डके अधिष्ठाता कहलानेवाले भगवान नारायण भी परिवर्तनशील होनेसे क्षर ब्रह्म कहलाते हैं । अभी तक एक ब्रह्माण्डकी चर्चा की गई है । ऐसे असंख्य ब्रह्माण्ड शून्यमण्डलमें फिरते रहते हैं । इन सभी ब्रह्माण्डोंको क्षर ब्रह्माण्ड एवं उनके अधिष्ठाता भगवान नारायणको क्षर ब्रह्म कहा जाता है । जिस प्रकार क्षर ब्रह्माण्ड असंख्य हैं उसी प्रकार क्षर ब्रह्म भी असंख्य हैं । क्षरका अर्थ क्षरणशील अर्थात् परिवर्तनशील या नाशवान होता है । प्रत्येक ब्रह्माण्डमें भगवान नारायण, ब्रह्मा-विष्णु-महेश एवं तैतीस कोटि देवी-देवतायें होते हैं । इन सभीको क्षर कहा गया है । ये सभी क्षरब्रह्मके अन्तर्गत आते हैं ।

इन असंख्य क्षरब्रह्माण्डको बनानेवाले कार्यब्रह्म अथवा अक्षरब्रह्म कहलाते हैं । वे अविनाशी हैं, अपरिवर्तनशील हैं और सभी क्षरब्रह्माण्डोंके मूलमें स्थित होनेसे कूटस्थ भी कहलाते हैं । अक्षरब्रह्म नेत्रभ्रमण मात्रमें इन असंख्य ब्रह्माण्डोंको बनाते हैं, टिकाते हैं और लय करते हैं । इस प्रकार ब्रह्माण्डोंकी सृष्टि, स्थिति और लयका कार्य करनेके कारण अक्षरब्रह्मको कार्यब्रह्म भी कहा जाता है। उनका बहुत बडा ऐश्वर्य है। उनके विभिन्न विभूति स्वरूप हैं। उनको अव्याकृत, सबलिक, केवल एवं सत्स्वरूप कहा गया है। प्रणव ब्रह्म, गोलोकी नाथ आदि अनेक विभूतियाँ अक्षरब्रह्मके उक्त चार पादोंमें समाहित हैं। अक्षरब्रह्मको चतुष्पाद विभूति भी कहा गया है। सभी विभूतियाँ अक्षरब्रह्मके ही अंग हैं इसलिए मूलरूपसे अक्षरब्रह्म ही कहलाते हैं ।

ऐसे महान अक्षरब्रह्म भी पूर्णब्रह्म परमात्माके अंगस्वरूप या अंशमात्र हैं एवं पूर्णब्रह्मकी आज्ञा लेकर ही ब्रह्माण्डोंकी सृष्टि, स्थिति एवं लय करते हैं तो स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मा कितने महान् होंगे ? इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है । इसलिए पूर्णब्रह्म परमात्माको शब्दातीत कहा है । इसका तात्पर्य है कि हमारी व्यावहारिकी भाषाके शब्द परमात्माका वर्णन नहीं कर

पाते हैं । शास्त्रोंमें पूर्णब्रह्म परमात्माके विषयमें विस्तृत वर्णन न कर संक्षेप मात्रमें उल्लेख किया है अर्थात् संकेत मात्र किया है । पूर्णब्रह्म परमात्माका धाम परमधाम है । स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मा एवं परमधामके विषयमें प्रायः सभी शास्त्र संकेत मात्र करते हैं ।

अक्षरब्रह्मकी चतुष्पाद विभूतिका वर्णन करते हुए वेदोंमें कहा है,

एतावानस्य महिमा अतो ज्यायांश्च पुरुषः ।

ऋग्वेद १०/९०/३

यह तो अक्षरब्रह्मकी महिमा मात्र गायी है । स्वयं अक्षरब्रह्म इससे अति श्रेष्ठ हैं । जब अक्षरब्रह्मके विषयमें ही शास्त्र मौन धारण करते हों तो परब्रह्मकी स्थिति तो और भी महान् है । इसीलिए शास्त्रोंमें परब्रह्मका उल्लेख मात्र किया है । इससे यह ज्ञात होना चाहिए कि पूर्णब्रह्म परमात्मा मन एवं वाणीके गोचर नहीं हैं, उनको अवाङ्मनसगोचर कहा गया है ।

मन और वाणीके विषयसे परे होते हुए भी परमात्माको जानना एवं समझना इति आवश्यक है । अन्यथा जन्म और मृत्युके चक्रसे पार नहीं हो सकते हैं । वेदोंमें भी कहा है,

तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

इन परमात्माको जानकर ही मृत्युको पार किया जा सकता है अन्यथा जन्ममृत्युके चक्रसे पार होनेका कोई अन्य मार्ग नहीं है ।

विदित हो कि इन्हीं परमात्माको जानने, समझने एवं अनुभव करनेके लिए मनुष्य जीवन प्राप्त हुआ है । जगतमें प्रसिद्ध चौरासी लाख योनियोंके द्वारा संसारके सुख एवं वैभव भोगे जा सकते हैं । किन्तु पूर्णब्रह्म परमात्माकी प्राप्ति तो मनुष्य जीवनके द्वारा ही संभव है । महामति श्री प्राणनाथजी कहते हैं,

सेठे तमने सारी सनंधे, सौंप्युं छे धन सार ।
अनेक जवेर जतन करी, तमे लाव्या छो आणी वार ॥

सेठोंके भी सेठ पूर्णब्रह्म परमात्माने मनुष्य देहके साथ तुम्हें असंख्य

सम्पदा प्रदान की है । उनका सदुपयोग करो और इसी जीवनमें परमात्माका अनुभव करो । साथमें यह भी ज्ञातव्य है कि मनुष्य शरीरके अतिरिक्त सभी शरीर भोग योनियाँ हैं । उनके द्वारा नश्वर जगतके विभिन्न प्रकारके सुख भोगे जा सकते हैं । जबकि मानव शरीरके द्वारा भौतिक सुख भी भोगे जा सकते हैं और परमात्माकी प्राप्ति भी की जा सकती है । किन्तु मनुष्य शरीर प्राप्त करनेके पश्चात् भी मात्र भौतिक सुख ही भोगे गए और जन्ममृत्युके चक्रसे छूटकर परमात्माके धाममें पहुँचनेका मार्ग प्राप्त नहीं किया तो उस मनुष्यको श्रीमद्भागवतमें आत्मघाती कहा है । यथा,

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदूर्लभं, प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं, पुमान्भवाब्धिं न तरेत्स आत्महा ॥

(श्रीद्भागवत)

परमात्माकी प्राप्तिके लिए मुख्यतया दो मार्ग बताये गए हैं । उनको ज्ञान और भक्ति कहा है । ज्ञानके द्वारा परमात्माको जाना जा सकता है जिससे शरीर छोड़नेके पश्चात् आत्मा परमधाममें पहुँचती है । भक्तिके द्वारा परमात्माको इसी जीवनमें अनुभव किया जा सकता है । जिस ज्ञानके द्वारा पूर्णब्रह्म परमात्माको जाना जा सकता है उसे श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें तारतम ज्ञान कहा गया है और जिस भक्तिके द्वारा पूर्णब्रह्म परमात्माका अनुभव किया जा सकता है उसे प्रेमलक्षणा भक्ति कहा गया है ।

अनेक लोग देवी देवताओंको परमात्मा मानते हैं, अनेक लोग अवतारोंको परमात्मा मानते हैं, अनेक लोक ब्रह्मा-विष्णु-महेशको परमात्मा मानते हैं तो अनेक लोग भगवान नारायणको परमात्मा मानते हैं । ये सभी परमात्मा न होकर उनकी शक्तियाँ मात्र हैं । ये शक्तियाँ भी परिवर्तनशील होनेसे उनको परमात्माका क्षर स्वरूप कहा गया है । इन क्षर स्वरूपोंको बनानेवाली परमात्माकी दूसरी शक्ति है जिसे पमात्माका अक्षर स्वरूप कहा गया है । पूर्णब्रह्म परमात्मा तो क्षर एवं अक्षरसे श्रेष्ठ होनेसे अक्षरातीत कहलाते हैं । किन्तु समान्य मनुष्यको यह रहस्य पता नहीं होता है । इस रहस्यको स्पष्ट

करनेवाले ज्ञानको ही तारतम्य ज्ञान कहा है। तारतम्य ज्ञानके द्वारा परमात्माके क्षर, अक्षर एवं अक्षरातीत स्वरूपको जाना जाता है। कहा भी है,

तारतम्येन जानाति सच्चिदानन्दलक्षणम् ।

परमात्माका स्वरूप सच्चिदानन्द है। तारतम्य ज्ञानके द्वारा इस स्वरूपका बोध होता है। किन्तु आत्मज्ञान होने पर ही ब्रह्मबोध हो सकता है। इसीलिए महामतिने कहा,

पहेले आप पहचानो रे साधो, पहले आप पहचानो ।
बिना आप चिन्हें पारब्रह्म को, कौन कहे मैं जानो ॥

(किरन्तन १/१)

हे साधको ! सर्वप्रथम स्वयंको आत्माके रूपमें पहचानो। जब तक हम स्वयंको आत्माके रूपमें नहीं पहचानेंगे तबतक हमें पात्मात्माका ज्ञान नहीं होगा। इसप्रकार तारतम्य ज्ञान आत्माका भी ज्ञान करवाता है और परमात्माका भी। इसलिए तारतम्य ज्ञान आत्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान दोनों है। यह ज्ञान रहस्यपूर्ण है। इसके रहस्यको समझनेके लिए परिष्कृत बुद्धिकी आवश्यकता होती है। सामान्यतया बुद्धि तीन प्रकारकी मानी गई है। स्मृति, मति और प्रज्ञा। उत्कृष्ट बुद्धिको प्रज्ञा कहा गया है।

जो लोग देहको ही आत्मा मानते हैं उनकी बुद्धि देहात्मबुद्धि कहलाती है। ऐसी बुद्धि सत्यको ग्रहण नहीं सकर सकती है। सत्य परमात्मा हैं। उनके अंश होनेके कारण आत्मा भी सत्य है। इस प्रकार सत्यको धारण करनेवाली बुद्धिको शास्त्रोंमें ऋतम्भरा प्रज्ञा कहा है। वास्तवमें ऋतम्भरा प्रज्ञा तारतम्य ज्ञानको धारण कर सकती है जिसके द्वारा आत्मा और परमात्माका ज्ञान सहज प्राप्त होता है। हमारी बुद्धि ऋतम्भरा प्रज्ञा बने इसके लिए हमें प्रयत्न करना चाहिए। मन एवं बुद्धिको अन्तर्मुख बनाने पर ही यह संभव है। जब बुद्धि मनके साथमें इन्द्रियोंके विषयोंकी ओर जाती है तब वह असत्य वस्तुओंको धारण करती है और विकृत हो जाती है। जब वह आत्माकी ओर उन्मुख होती

है और आत्माकी सत्यताको धारण करने लगती है तब वह शनैः शनैः ऋतम्भरा प्रज्ञा बन जाती है। इसके लिए हमें सदैव आत्माका चिन्तन करना चाहिए और सत्यका अनुसरण करना चाहिए। जब हमारे मन और बुद्धिको सत्यका स्वाद प्राप्त होने लगेगा तब वे सत्यकी ओर आकृष्ट होंगे और परिपुष्ट होने लगेंगे। इस प्रकार मन एवं बुद्धि दोनों ही परिष्कृत होने लगेंगे। परिष्कृत होनेके पश्चात् की उनकी स्थिति ऋतम्भरा प्रज्ञा है। इसी स्थितिमें बुद्धि आत्मा और परमात्माका ज्ञान प्राप्त करती है।

इस प्रकार आत्मज्ञान प्राप्त करने पर ब्रह्मज्ञान प्राप्त करनेका मार्ग भी स्पष्ट होने लगेगा। परमात्माकी ओर रुचि बढने पर धीरे धीरे ब्रह्मज्ञान भी प्राप्त होगा। तब परमात्माका यथार्थ स्वरूप समझमें आयेगा। इतना होने पर अनेक साधकोंको सन्तुष्टि हो जाती है तथापि कुछ साधक इससे आगे बढना चाहते हैं ऐसे साधक जीवनमें परमात्माकी अनुभूति करना चाहते हैं। उनके लिए भी मार्ग प्रशस्त किया गया है। वह है प्रेम मार्ग। प्रेमके द्वारा साधक इसी जीवनमें परमात्माका अनुभव कर सकता है। प्रेम साधनाके सभी रुकावटोंको दूर कर देता है। जब सभी आवरण दूर हो जायेंगे तभी परमात्माकी अनुभूति होगी। इसी जीवनमें परमात्माकी अनुभूति हो सकती है। प्रेममार्ग इसी जीवनमें परमात्माकी अनुभूतिके लिए है। प्रेम सभी द्वारोंको खोल देता है। यथा,

प्रेम खोल देवे सब द्वार, पार के पार पियाके पार ।

साधनाके अन्यमार्गमें विभिन्न अवरोध होनेसे दीर्घकालीन साधनाके पश्चात् ही परमात्माकी अनुभूति संभव है किन्तु प्रेम साधनामें तत्काल उसी क्षण परमात्माकी प्राप्ति संभव है। महामति कहते हैं,

पंथ होवे कोटि कलप, प्रेम पहुँचावे मिने पलक ।

प्रेमके लिए तो यहाँतक कहा है कि प्रेमी साधक इसी शरीरमें रहते हुए परमात्माका प्रत्यक्ष दर्शन कर लेता है। परमात्मा उसके समक्ष प्रकट भी

होते हैं और वह ध्यानमें परमात्माके पास भी पहुँच जाता है । इसके लिए महामति कहते हैं,

प्रेम ऐसी भाँत सुधारे, ठौर बैंठे पार उतारे ।

व्रजकी गोपियोंकी स्थिति ऐसी थी । जागृत ब्रह्मात्माएँ इसी स्थितिमें होती है। महामति कहते हैं, ऐसी आत्माएँ क्षणमात्रके लिए भी अपने परमात्मासे दूर नहीं होती हैं । यथा,

खाते पीते उठते बैठते, सोवत सुपन जाग्रत ।
दम ना छोडे मासूकसों, जाकी असल हक निसबत ॥

इस प्रकार श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें परमात्माको जाननेके लिए तारतम्य ज्ञान एवं पानेके लिए प्रेम लक्षणा भक्तिका उपदेश दिया गया है ।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका हिन्दी/गुजराती मासिकके सम्बन्धमें

विवरण	**: (फार्म ४ के नियम ८ के अनुसार)**
प्रकाशन स्थान	**: श्री ५ नवतनपुरी धाम-खीजडा मन्दिर, जामनगर**
प्रकाशनकी आवृत्ति	**: मासिक**
सम्पादक	**: स्वामी श्री लक्ष्मणदेवजी महाराज तथा श्री कनकराय व्यास**
सम्पादक और मुद्रकका राष्ट्रीय सम्बन्ध	**: भारतीय**
सम्पादक और मुद्रकका पता	**: श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर**
प्रकाशक और स्वामित्व	**: आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज**
राष्ट्रीयता	**: भारतीय**
पता	**: श्री ५ नवतनपुरी धाम खीजड़ा मन्दिर- जामनगर**

मैं आचार्य कृष्णमणि महाराज एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वासके अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं ।

श्री निजानन्द कथामृत

(ब्रह्मलीन पं. श्री कृष्णदत्त शास्त्री विरचित-निजानन्द चरितामृतसे)

(गतांक पृष्ट ३१ से क्रमश...)

श्री तारतम वाणीका प्रकट होना

इस प्रकार अखंड तेजोबलके द्वारा आप अद्वितीय[१] महत्त्वको प्राप्त होते हैं एवं[२] प्रकाश ग्रन्थ भी पूर्ण होता है । बादके षट्ऋतुके वर्णन द्वारा सद्गुरुका वियोग व्यक्त करते है । षट्ऋतु पूर्ण होनेके बाद कलश ग्रन्थ प्रारंभ होता है । कलशका केवल प्रारंभ मात्र यहां पर हुआ है, वह आगे सूरतमें जाकर पूर्ण होता है । दीव बन्दरमें जहाजमें बैंठकर चले तो बेहदवाणीका अवतरण हुआ । कुछ रासकी रामतें और वेदान्तके कीर्तन मेरता शहरमें अवतरित हुए । अनूप शहरमें जब श्रीजी पहुंचे तो सनंध ग्रन्थकी वाणी प्रकट हुई एवं यहीं पर विराज कर प्रकाश और कलशको गुजराती भाषासे हिन्दी भाषामें वर्णन किया । खुलासाके कुछ प्रकरण और कुछ अन्यवाणी रामनगरमें

---

१. श्री धनीजीको जोस आत्म दुलहिन, नूर हुकुम बुध मूल वतन ।
यें पांचों मिल भई महातम, वेद कतेबों पहुंची सरत ॥

यद्यपि श्रीजीके अन्तर्गत पांचों स्वरूप श्री देवचन्द्रजीके कलेवर परित्यागके समय ही आ विराजे थे, परन्तु शास्त्रोंमें जो सरत लिखी थी कि - यस्ते शोकाय **तन्वंऽरिरेच क्षरद्धिरण्यं शुचयोऽनु स्वाः ।** (अथर्व कां ५ सुक्त १ मं. ३) वह यहां पर पूर्ण होती है । क्योंकि अखंड तारतम वाणीरूप किरणोंका प्रकाश यहांसे ही प्रारम्भ होता है । और यहींसे शुद्ध दीप्तियां सब ओर फैलती हैं ।

२. चौद भुवननो कहिये भान, रास प्रकास उदे थया जाण ।
चौदे भुवननो नहीं आसरो, उदेकार अति घणो थयो ॥
शब्दातीत ब्रह्माण्ड कीधां प्रकाश, ये अजवालुं जोशे साथ ।
आगल ये थासे विस्तार, जीव घणा उतरशे पार ॥

प्रकट हुई। खिलवत, परिक्रमा, सागर, सिनगार, सिन्धी और मारफत आदि ग्रन्थ श्री ५ पद्मावतीपुरी धाममें पूर्ण हुए एवं क्यामतनामा चित्रकूटमें लिखा गया। इस प्रकार सब तारतम वाणी प्रकट हुई, इसके अतिरिक्त बहुतसे प्रकरण प्रसंगानुसार भिन्न भिन्न स्थलोंपर प्रकट हुए हैं, उनका वर्णन उन्हीं स्थलों पर करेंगे।

इधर राजा और मन्त्रीको सूबासे सलाह करते करते लगभग एक वर्ष बीत गया विक्रम सं. १७१५ में अहमदाबादसे लौटकर अपने घर आये तो कुल हकीकत सुनी। वजीरके पुत्र कलत्रने जो कुछ चमत्कार और दैवी दृश्य[१] देखे थे। सब कह सुनाये। कहने लगे आप बिना विलम्ब किये ही श्री मिहिराजको तत्काल बन्धनमुक्त कर दीजिये, नहीं तो आपका कल्याण न होगा। एक तो आपने बिना अपराध उनको बन्धनमें डाल रखा है। यह कितना बडा अन्याय! अब उन्हें प्रसन्न कर यहांसे शीघ्र मुक्त करें।

श्री महेराज सरूपको, दीन्हों दुख अति जोर।
बिदा करौ आदर सहित, करि बिनती कर जोर॥
सुन वजीर ततछिन तहां, लीने तुरत बुलाई।
तीन भ्रात पहिराई कै, पठये चित मिलाई॥
बानी लै सब आपनी, पहुंचे मन्दिर आई।
विहारीजीसों मिली तहां, वीतक कही बनाई॥

(वृतान्त मु. ४३)

वजीरने जब सब किस्सा सुना तो हृदय कांपने लगा और अपनी भूलका बहुत पश्चात्ताप किया। पर जो कुछ होना था हो चुका, पछताना व्यर्थ था। वजीरने दोनों भाइयों सहित श्रीजीको

१. यहां पर अखंड रास वर्णनके समय श्री कृष्णजी और गोपियोंका रास मंडल प्रत्यक्ष देखनेमें आता था। नाना भांति व्रजलीला और कृष्णलीलाके दर्शन प्रत्यक्ष होते थे, जो पासके घरके वजीरके घरवालोंने देखे थे।

तत्काल बन्धनसे मुक्त कर अपनी भूलके लिये क्षमा मांगी एवं शिरोपाव[१] पहनाकर बहुत कुछ सांत्वना दे विदा किया। श्रीजीसे जो कुछ वाणी रास, प्रकाश षट्ऋतुकी प्रकट हुई थी, उसे लेकर भाइयों सहित घर आये। विहारीजीको प्रणाम करके जिस प्रकारसे तारतम वाणी प्रकट हुई और धामधनीने कृपा की, वह सब कह सुनाया। तारतम वाणीके प्रकट होनेसे सुन्दरसाथको परम आनन्द हुआ। सबको पूर्ण निश्चय हो गया कि सुन्दरसाथजीकी जागनी श्रीजीके हाथमें है। अतएव धामधनी सद्गुरुने इनके हाथमें सुन्दरसाथको सौंपा है।

चौंक भई हिरदे बडी, विहारीजू के ताहिं।
इन करि लीन्हों आप पति, अपने बचपन माहिं॥
अब बाकी कहूं का रह्यो, कीन्हीं गादी हाथ।
होई आप सिरदार इत, बोध करत सब साथ॥

(वृतान्त मु. ४३)

तारतम वाणीके प्रति सुन्दरसाथकी अटूट श्रद्धा और श्रीजीके ऊपर धामधनी भाव देखकर विहारीजी चौंक पड़े। सोचने लगे कि अब तो मेरे हाथसे गादी भी चली। एक तो यों ही ज्ञान चर्चाके द्वारा सिरदार बनकर सुन्दरसाथको वशमें कर रखा था। अब तो इनकी तारतमवाणी सुनकर और भी कोई मुझे न पूछेगा। अतः कुछ युक्ति रचना चाहिये इस प्रकार निश्चयकर बात बना डाली। कहने लगे, हे मिहिरराजजी! मैं तो इसी नगरमें बैंठा था। तुमने इतना विरह क्यों किया? यह सब तो मेरे ऊपर आ पडा। अब ऐसा करो कि जो कुछ हुआ, उसे तो यों ही रहने दो और अपना उपदेश जिस प्रकार चला आया है, उसी प्रकार

१. शिरोपावमें शरीरके पांच कपडे होते हैं, परंतु इसका महत्त्व राजदरबारमें विशेष माना जाता है। यह साधारण पुरुषोंको नहीं मिलता। कोई बडा भारी राज्यका कार्य करने पर मिला करता है। कभी कभी राजा किसीको बिना अपराध दंड देवे तो उसके लिये क्षमा मांगकर शिरोपाव देनेसे राजाका अपराध क्षम्य हो जाता है। इस प्रकारके शिरोपाव देनेको दिल मिलाना भी कहते हैं। श्रीजीको उपर्युक्त शिरोपाव इसी रूपमें दिया गया था।

चलने दो । इस भातिं कहकर तारतमवाणीका गौरव सुंदरसाथमें न फैलने दिया और उसे जहांका तहां रख दिया । यद्यपि सुंदरसाथके हृदयमें तारतमवाणीके रसपान करनेकी उत्कट इच्छा थी, परंतु विहारीजीके स्वार्थपूर्ण ध्येयने उसे परिपूर्ण न होने दिया ।

जबसे श्रीजीके हृदयमें श्री अक्षरातीत धनीका साक्षात्कार हुआ और तारतमवाणी प्रकटी, प्रतिक्षण हार्दिक विचारोंमें परम तत्त्वका चेतन प्रवाह बहने लगा । आपके अलौकिक बोधसे सुंदरसाथको परम शांति प्राप्त होने लगी । वे आपके उपदेश वचनोंको श्रवण करते करते कभी तृप्त होते ही नहीं थे ।

आपने सुंदरसाथके हृदयमें एक प्रकारका ऐसा नवचेतनतत्त्व फूंक दिया कि सबके सब चकोर चंद्रवत् आपके मुखारविंदके वचन श्रवण करनेके लिये टकटकी लगाये रहते थे । परंतु यह सब विहारीजीको कंटक रूप था । श्रीजीके उपदेशकी पद्धति और अलौकिक ज्ञानके मुकाबिले विहारीजीके उपदेशका गौरव बढ़ नहीं पाता था । अतः विहारीजीने सोचा कि यदि इनका विवाह कर लौकिक सूत्रमें बांध दूं तब तो यह स्वतः ही किसी कार्यमें लग जावेंगे । इस प्रकार निश्चयकर श्रीजीके सामने विवाह करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया । श्रीजी तो सब प्रकारसे वीतराग हो चुके थे । स्वप्नमें भी लौकिक वासनाका उदय नहीं होता था । अतः आपने विवाह करनेका घोर विरोध किया । कहने लगे हमें तो केवल धामधनीके वचनोंका पालन कर सुंदरसाथको जाग्रत करना है । विवाह करने की बिल्कुल इच्छा नहीं है अतः आप विवाहका हठ न करें । केवल यही आशीर्वाद दीजिये कि ब्रह्मसृष्टिको जाग्रत करनेके कार्यमें पूर्ण सफलता मिले । इत्यादि अनेक प्रकारसे अनुनय किया और हठ न करनेके लिये प्रार्थना की । परंतु विहारीजीके समक्ष यह सब व्यर्थ गया । विहारीजीने अपनी टेक न छोडी और छल बलसे श्रीजीका विवाह करा दिया ।

परखि[१] व्याह कीन्हों तहां, निज अमलावती अंग ।
अपनो रुप स्वभाव दै, कर गहि लीन्हीं संग ॥

इस प्रकार आपकी इच्छा विरुद्ध भी विहारीजीके विशेष आग्रह और श्री अमलावतिस्वरूप ब्रह्मवासनाका सम्बन्ध आ मिलनेसे श्रीजीको निरूपाय होकर विवाह कर लेना पडा । **(क्रमश.....)**

१. किसी कार्य प्रसंग श्रीजी जूनागढ तरफ जा रहे थे । बीचमें प्रातःकालके समय धोराजी नामका एक गाम आया तो स्नान ध्यानादिके लिये आप वहां पर ठहर गए । गामके पास एक छोटीसी नदी थी, उसके किनारे स्नान ध्यान करने लगे । वीरजी भाणजी नामके एक क्षत्री वहां पर रहते थे । उनकी तेजकुंवरी नामक एक कन्या थी । जो पिताके साथ पानी भरने नदीपर गई थी । पानी भरके घडा लेकर लौटने लगी । वहां पर श्रीजीको बैठे देखा तो घूंघट कर लिया ।

कन्या कुंवारी थी, अभी विवाह भी नहीं हुआ । उसका घूंघट काढना सब प्रकार विरूद्ध था । अतः पिताको बहुत आश्चर्य हुआ । पिताने कहा - बेटी तेजकुंवरी ! तुमने घूंघट किसके लिये काढ लिया । पुत्रीने कहा- पिताजी यहां पर मेरे पूर्वजन्मके पतिदेव बैठे हैं । अतः आपके सामने घूंघट काढना धर्म है । परन्तु इतनेसे पिताको विश्वास न हुआ तो पुत्रीने अपने सास ससुर देवर जेठ और परिवारका सब परिचय कह सुनाया । जब पिताने जाकर श्रीजीसे पूछा तो बात सत्य निकली । वहांके सब लोग आश्चर्यमें पड गये । निदान यह बात विहारीजीने सुनी तो बहुत खुश हुए । क्योंकि एक तो वे विवाहके लिये यों ही जोर लगा रहे थे । अब तो ब्रह्मवासनाका पूर्व संयोग आ मिला । अतः श्रीजीको बाध्य कर उनके साथ विवाह करा दिया । इस बातको लल्लुजीने भी लिखा है ।

- जिंदगीमें मुश्किल चीजोंसे डरनेकी बजाय उन्हें समझिए। जितना समझ जाएंगे, उतना ही कम डरेंगे - मैरी क्यूरी (नोबेल अवार्डी साइंटिस्ट)।
- अपनी जिंदगी की जिम्मेदारी खुद लें, आपके लक्ष्य तक आपको ही पहुंचना है, किसी और को नहीं।- लेस ब्राउन (अमेरिकन मोटिवेशनल स्पीकर)।

जीवन निर्माणकी-श्रेष्ठ पद्धति

डॉ. श्री जयनारायणजी मल्लिक

आज मानव जीवन अशान्त है । अनवरत संघर्षके बीच वह कुछ टटोल रहा है । वह शाश्वत शान्ति चाहता है । पर वह शान्ति उसे मिलेगी कैसे ? पाश्चात्य संसार बाह्य प्रकृतिपर तो विजय प्राप्त करनेकी चेष्टा करता है, पर अन्तःप्रकृति उसे नचाती रहती है । काम, क्रोध, लोभ, मोहका वह गुलाम बन गया है । आज एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रको ठगना चाहता है । उसे हड़पना चाहता है । जीवनमें वैषम्य बहुत बढ़ गया है । प्राच्य जगत्की दशा भी अधिक सन्तोषप्रद नहीं है । वहाँ भी विद्या विवादके लिये, धन अभिमान और विलासिताके लिये तथा शक्ति दूसरोंको पीड़ा पहुँचानेके लिये एकत्र की जाती है, पर सारे अनर्थोंकी जड़ चरित्रहीनता है । यदि हम चरित्रवान् नहीं हो सके तो हमारा धन, शक्ति और विद्या भी व्यर्थ है । विद्वानको चरित्रवान् होना चाहिये, विद्या तो एक प्रकाश है, उसकी सहायतासे सत्यका अन्वेषण करना चाहिये । जिसके हाथमें रोशनी है, वह यदि दूसरोंको गुमराह करे, वह यदि दूसरोंको सच्चा रास्ता नहीं दिखाये तो यह विद्याका दुरुपयोग होगा । एक मूर्ख यदि भूल करता है तो वह केवल अपने आप नष्ट होता है, राष्ट्रकी विशेष क्षति नहीं होती किन्तु यदि एक पण्डित या नेता भूल करता है तो वह अपने साथ हजारोंको डूबो देता है । क्योंकि उसके अनुयायी हजारों हो जाते हैं । जितने पण्डित, नेता और शास्त्रज्ञ हैं, सभी चरित्रवान होना आवश्यक समझते हैं पर व्यावहारिक जीवनमें न जाने सत्यसे वे क्यों इतनी दूर चले जाते हैं ।

चरित्रकी आवश्यकता मनुष्य योनिमें विशेष है । यदि हमारे कर्म प्रवृत्ति वासनाकी प्रेरणासे किये जाते हैं, तो हम पशुताकी ओर झूक जाते हैं । यदि हमारे कर्म, कर्तव्य और विवेककी प्रेरणासे किये जाते हैं, तो हममें मानवताकी प्रधानता रहती है । मानवताकी सबसे बड़ी देन है प्रवृत्तिके ऊपर

विवेककी विजय। मानवता जब अपना कर्तव्य ज्ञान भूलकर भोग-वासनाकी ओर झूक जाती है, तब उसका नाम हो जाता है, 'पशुता', पर मानवता जब उलट जाती है, तब उसका नाम हो जाता है 'दानवता'। पशुता मानवताको भोग वासनामें घसीटकर उसे कलंकित कर डालती है, पर दानवता तो मानवताका संहार ही कर डालती है। पशुता मानवताकी कमजोरी है। दानवता मानवताकी मौत। पशुता और दानवताके प्रभावसे मुक्त होनेका साधन है चरित्र निर्माण। सच्चरित्र व्यक्ति कभी भी पशुता और दानवताके चंगुलमें नहीं पड़ता। वासनाके ऊपर विजय केवल सच्चरित्रतासे ही सम्भव है, अन्यथा नहीं। सच्चरित्र व्यक्ति प्रलोभनोंके बीचमें पड़कर भी भ्रष्ट नहीं होता।

स्थूल-शरीरसे कर्म करनेपर अन्तःकरणमें एक तरंग उठती है, मनमें एक विकार उत्पन्न होता है। यही तरंग, यही विकार सूक्ष्मशरीरका पोषक और वासनाका विकास करनेवाला है। वासना संचित कर्मोंकी पुत्री और क्रियमण कर्मोंकी जननी है। हमारे व्यतीत जीवनके कर्मोंके अनुसार वासना तथा प्रवृत्तिकी रूपरेखा निर्मित होती है। यही वासना, यही प्रवृत्ति हमारे भविष्य-जीवनका पथ प्रदर्शन करती है। कामिनी और कांचनके सान्निध्यसे हमारे हृदयमें हलचल होने लगती है, वासना अँगड़ाई लेती है और अन्तरात्मामें एक कम्पन-मधुर सिहरनका अनुभव होने लगता है। संसार चक्रकी परिधिमें कर्मोंके पीछे वासना और वासनाके पीछे कर्म चलते रहते हैं, जिस प्रकार फलसे पेड़ और पेड़से ही फल होता है, उसी प्रकार वासना कर्म संस्कारकी जननी है और पुत्री भी। बाह्य इन्द्रियोंके दमनमात्रसे वासना नहीं मरती। इस संघर्षमें वही सफल हो सकता है, जो चरित्रवान् है।

यह मानव सृष्टिका श्रृंगार है। उसके अन्दर परमात्माकी एक दिव्य ज्योति जल रही है, जो उसे निम्नस्तरसे ऊपर उठाकर सत्कर्मोंकी ओर प्रेरित करती है और जीवन-यात्रामें उसका पथ-प्रदर्शन करती है। जब जीवनकी आँधी उठती है और तूफानी हवामें उत्ताल-तरंग माला संकुल विश्व पयोधि लहराने लगता है तब भव सागरके ज्वारमें एवं धूलिकणोंके वातावरणमें वह

प्रकाश क्षीण और मटमैला हो जाता है। मानव जीवनमें वह प्रकाश जितना ही जाज्वल्यमान रहेगा, मानवता उतनी ही प्रचुरमात्रामें उसके अन्तर्गत वर्तमान रहेगी। जब पशुता झाँकने लगती है, तब मनुष्य कर्तव्यनिष्ठा और ज्ञानको भूलकर इन्द्रियोंका दास बन जाता है और भोग वासनाकी ओर पागलकी तरह दौड़ने लगता है। हमारे अन्तर्गत सदैव देवासुर-संग्राम हो रहा है। हमारे अन्दर जो देवता है, वह हमें ऊपर उठानेकी चेष्टा करता है और एक दिव्य अलौकिक रश्मिमें हमें ओत-प्रोत करना चाहता है, पर हमारे जीवनमें जो दानव घुस गया है, वह देवताके साथ संघर्ष करके हमें नीचेकी ओर घसीट रहा है। इस संघर्षमें केवल सच्चरित्र व्यक्ति ही विजय प्राप्त कर सकता है। हमारे वैदिक साहित्यमें बलिदानकी चर्चा आयी है। हमारे अन्दर जो पशु घुस गया है, जो पशुता मानवताका रक्त पानकर उसे कमजोर बना डालती है। हमें उस पशुताका बलिदानकर मानवताको सबल और निर्मल बनाना है। जगज्जननीके सामने निरीह पशुओंका बलिदान करना नहीं है। मनुष्यके अन्दर जो पशु घुस गया है और उसे पापकी ओर घसीट रहा है, उसी पशुका बलिदान करना है। सच्चरित्र व्यक्तिके अन्तर्गत पशुता कभी प्रवेश नहीं कर सकती। पशुतासे बचनेके लिये सच्चरित्र बनिये।

कामना ही माया है। यही जीवके सामने दो खिलौने कामिनी और कांचन फेंक देती है, जिनसे मनुष्य जीवनभर खेलता रहता है। जबतक कामना नष्ट नहीं होती, तबतक अन्तरात्मामें ज्ञान-रश्मि नहीं छिटक सकती। कामनाको नष्ट करनेके लिये सच्चरित्र होना आवश्यक है। सच्चरित्र व्यक्त कामिनी और कांचनका सदुपयोग करता है, दुश्चरित्र व्यक्ति इनका दुरुपयोग। दुश्चरित्रका जीवन चौपट हो जाता है।

हमारे मस्तिष्कमें अनन्त शक्तियाँ सोई हुई हैं। पाश्चात्य जगत्ने इन शक्तियोंको जगाकर इन्हें अन्धकारसे प्रकाशमें लानेकी चेष्टा की। फिर भी इनके जीवनमें एक विराट् हाहाकार है, भोग-लिप्साका नग्न नर्तन है, स्वार्थ और अशान्तिकी भीषण ज्वाला है। इन्होंने मस्तिष्ककी शक्तियोंको जगाया तो सही,

पर उनका सदुपयोग करना नहीं सीखा । आर्य-जातिकी चिरन्तन प्रार्थना है, **'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमय'** असत्से सत्की ओर अन्धकारसे प्रकाशकी ओर तथा मृत्युसे अमरत्वकी ओर हमें ले चले । अमरत्वकी ओर जानेका संकेत है कि हम दीर्घजीवी हों, हमारा शरीर स्वस्थ और सबल रहे, **'जीवेम शरदः शतम ।'**

अन्धकारसे प्रकाशकी ओर जानेका संकेत है कि हम विद्वान हों, हम ज्ञान और विद्याका उपार्जन करें । विद्या ही प्रकाश है, अविद्या और अज्ञान ही अन्धकार । असत्से सत्की ओर जानेका संकेत है, सच्चरित्र होना, कोई बुरा काम नहीं करना । मनुष्यमें शरीर, मस्तिष्क और चरित्र ये ही तीन प्रधान हैं । तीनों स्वस्थ और विकसित होने चाहिये । इन तीनोंमें चरित्रका स्थान सर्वप्रथम है (असत् से सत्की ओर जाना) विज्ञानके द्वारा हम प्रकृतिपर विजय प्राप्त कर लेते हैं । प्रकृति हमारी गुलाम बन जाती है और हमारा सारा काम कर देती है । चरित्र हमारी अन्तःप्रकृतिपर विजय प्राप्त करनेकी चेष्ट करता है और मनुष्यको देवत्व प्रदान करता है । दुश्चरित्र व्यक्तियोंके हाथमें शासन या आणविक शक्तिके आनेसे नर संहार ही होगा, मानव-कल्याण नहीं हो सकता । शक्ति सच्चरित्रमें होनी चाहिये तभी विश्वका कल्याण होगा ।

इसलिये वर्तमानमें हमारे राष्ट्रके हितमें भविष्यके बालक और बालिकाओंका चरित्र निर्माण अत्यन्त आवश्यक है । इनके चरित्र निर्माणपर ही हमारा राष्ट्र सुखी और समुन्नत हो सकता है ।

आवास व्यवस्था

सुन्दरसाथजी, श्री ५ नवतनपुरी धाममें आप सभीके लिए आवास एवं भोजनकी सुन्दर व्यवस्था है । इसको और व्यवस्थित करनेका प्रयत्न किया जा रहा है । इसके लिए आप सभीका सहयोग अति आवश्यक है । यदि आप अपने आगमनकी सूचना पहलेसे ही देंगे तो व्यवस्थामें सरलता रहेनेके साथ-साथ आप सभीकी यथोचित व्यवस्था भी होगी ।

संपर्क : आवास व्यवस्था, 9714009606 / 8511226600

आरोग्य

नयें पुराने असाध्य रोगोंका एक सरल उपचार 'पानी प्रयोग'

इस चमत्कारिक 'पानी प्रयोग' वैसे तो लाखों वर्ष पूर्व ही हमारे ऋषि-महर्षिओंने प्रयोगमें लायें हैं। आज वैज्ञानिक परीक्षणमें भी यह उतना ही सफल हुआ। आईये हम भी इसका प्रयोग कर लाभान्वित बनें।

शिर दर्द, पेटकी सारी बिमारियाँ, ब्लड प्रेसर, वात, प्यारलाईसीस, बेहीसी, कोलस्ट्रोल वध-घट, कफ, खाँसी, अस्थमा, टी.वी, मेनिन्जाईटिस, लीवरके रोगों, पेशाबकी विमारीयाँ, एसिडिटी, गेस ट्रबल, कबजियत, पाईल्स, डायाबिटीस, आँखकी विमारीयाँ, महिलाओंके अनियमित मासिक, प्रदर गर्भाशयका केन्सर, नाक तथा गलाके रोगों जैसे अनेक रोग इस 'पानी प्रयोग' जैसा सरल उपचारसे ठीक होते हैं।

पानी प्रयोग कैसे करें.....तो देखें कितना सरल है।

प्रातः जल्दी उठकर हाथ मुख धोये वगैर एवं ब्रश-दातौन आदि भी किये विना १२५० ग्राम (४ ग्लास) पानी पैरके बल वैंठकर प्रतिदिन पीना चाहिए। पानी पीनेके बाद सरलतासे ब्रश, दातौन एवं स्नानादि कर सकते हैं। परन्तु ध्यान रखें पानी पीनेके बाद ४५ से १ घण्टा पर्यन्त कुछ भी खाना पीना नहीं चाहिए। यह प्रयोग प्रारंभ करनेके बाद नास्ता एवं भोजनके आधा घण्टा पूर्व २ ग्लास, नास्ताके १ घण्टा एवं भोजनके २ घण्टे बाद चाहे उतना पानी पी सकते हैं। रातको सोनेके आधा घण्टा पूर्व कुछ नहीं खाना चाहिए। हां सोनेसे पूर्व पानी जरूर पीयें। बिमार एवं नाजुक प्रकृतिके लोग प्रारंभमें एक साथ ४ ग्लास पानी नहीं पी पायेंगे। उन्हें शनैः शनैः अभ्यास करना चाहिए १०-८ दिनमें सरलतासे ४ ग्लास पानी पी पायेंगे।

इस सरल उपचारके नियमित प्रयोगसे निम्नलिखित असाध्य बिमारियाँ भी इतने समयमें कन्ट्रोलमें आने लगते हैं,

हाई ब्लड प्रेशर (१ महिना), टी.बी.(२ महिनेमें), केन्सर (३ महिनेमें) डायाबिटीस (२१ दिनमें), गेसकी तकलीफ (७ दिनमें), कबजियत (५ दिनमें) ।

नोंट : इसके प्रयोगसे कुछ भी नुकसान नहीं है किन्तु फायदे ही फायदे हैं । यह ऐसा उपचार है जो सर्व रोगोंके लिए फायदेमंद है । जो रोगी हैं उन्हें तो अवश्यमेव करना चाहिए । जिसे कुछ भी बिमारी नहीं है वे भी इसका प्रयोग नियमित करें तो अप्रकट रोग हो तो भी निर्मूल हो जायेंगे । मानव शरीमें अप्रकट अनेक बिमारियाँ होती है उसके रोकथामके लिए भी यह अति उत्तम प्रयोग है । रोग बाहर तो तब निकलता है जब वह अन्दर जड़े जमा चूका होता है । अतः इसके प्रयोगसे अन्दरो-अन्दर जड़ें जमा रही बिमारियाँ भी दूर हो जाती हैं ।

होरी

फूल गेंदनसे मारी, हो मां मोहिं, फूल गेंदनसे मारी ॥
मैं जल जमुना भरन जाती थी, बीच मिलो गिरधारी ॥
केसर रंग मेरे शिर डार्यो, भीग गई तन सारी ॥
चोवा चन्दन अतर अरगजा, हाथ भरी पिचकारी ॥
अबीर गुलाल मेरे मुख डार्यो, देत होरिनकी गारी ॥
टेर लई निजधामकी सुन्दरी, आये मिलीं नारी ॥
परत मार बांसनकी भारी, ग्वाल करत किलकारी ॥
हो हो कार दौडी जित तितथें, घेर लियो गिरधारी ॥
पकड लियो पिया व्रज भूषणको, खेल मच्यो अति भारी ॥
आंजि आंजि मुख मांजे लालको, लाल कहे हो हारी ॥
मुरली पीताम्बर छीन लियो है, फगुवा दीजे विहारी ॥
फगुवा हमारो दीजे लाड़ले, बोलावो जसोदा महतारी ॥
मुरली पीताम्बर तबही देऊंगी, जब सीस नमावो राधा प्यारी ॥
रस वस कीन्हों सब सुख दीन्हों, 'एहेल'' सखी बलिहारी ॥

आहार संयम

भारतीय धर्मोंने शरीरको धर्मका मुख्य साधन माना है। **शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्।** इसलिए प्रत्येक साधकका कर्तव्य है शरीरको स्वस्थ रखे। अजीर्ण हो जाने पर भोजनका त्याग कर दे और भूख लगने पर भोजन करे।

अधिकांश व्यक्ति स्वादके लिए भोजन करते हैं, कतिपय स्वास्थ्यके लिए तो कतिपय साधनाके लिए। स्वादके लिए भोजन करना भोजनका निकृष्टतम उद्देश्य है। वह स्वादको ही प्रमुखता देता है। स्वादके लिए स्वास्थ्यको भी दांव पर लगा देता है। ऐसे लोग विविध रोगोंसे संत्रस्त होते है। भयंकर पीड़ा सहते हुए तड़प तड़प कर प्राण गंवाते हैं।

भोजनका दूसरा उद्देश्य है स्वास्थ्य। स्वास्थ्य पर ध्यान देनेवाले व्यक्ति कब और कैसे खाना चाहिए इन बातों पर चिंतन करके ही भोजन करते हैं। आयुर्वेदका एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है, **जीर्णे भोजनमात्रेयः।** पेटमें गया हुआ भोजन हजम हो जानेके पश्चात ही दूसरा भोजन करना इस सूत्रकी मूल शिक्षा है। पहेले किया गया भोजन हजम नहीं हुआ है और नया भोजन किया जा रहा है, तो वह भोजन रोगोंको निमंत्रण देगा। जितने भी रोग हैं उन सबकी जड़ अजीर्ण है, **अजीर्णसम्भवा रोगाः।** साधक भोजन हजम होने पर ही भोजन करता है।

स्वास्थ्य विशेषज्ञोंका कथन है कि अजीर्ण होने पर पानी पीना अमृतके सदृश है और भोजन करना विषके सृदश है। अब प्रश्न है कि पाचन हो जाने पर कैसा भोजन करना चाहिए। इसके लिए कहा, जिस आहारसे स्वास्थ्य पर बुरा असर न हो, बुद्धि निर्मल और स्वस्थ बनी रहे, वही भोजन उपयुक्त है। अनेक व्यक्ति स्वास्थ्यके नाम पर अण्डे, मांस, मछली आदि अभक्ष्य पदार्थोंके सेवन पर बल देते हैं, किन्तु ऐसे तामसिक और अभक्ष्य आहारसे बचना चाहिए।

वस्तुत भोजनके सम्बन्धमें विवेकी पुरुषको इस सूत्रको सदैव स्मृतिमें रखना चाहिए। **हितभुक्, ऋतुभुक्, मितभुक्**। उसे सदा ऐसा भोजन करना चाहिए जो स्वास्थ्यके अनुकूल हो, मन और बुद्धिमें सात्विकता लाए, ऋतुके अनुकूल हो और परिमित मात्रामें खाया जाए अर्थात् भूखसे अधिक भोजन कभी नहीं करना चाहिए।

नियत समय पर संतोषके साथ भोजन करें। यह स्मरणीय है कि भोजन करते समय मन प्रसन्न रहना चाहिए, स्वास्थ्यके साथ ही उसे साधनाका भी लक्ष्य रखना चाहिए। अतः भोजन पूर्व कुछ क्षण परमात्माका भजन करें प्रथम वह भोजन परमात्माको अर्पण करे ताकि वह प्रसाद बने। फिर उसे परमात्माका प्रसाद समझकर प्रेमपूर्वक ग्रहण करें। पशु भी स्वास्थ्यका ध्यान रखता है, वह भी सूंघ सूंघकर खाता है। यदि उसका पेट भर जाए तो चाहे कितना भी अनुकूल भोजन क्यों न हो, वह नहीं खाता। तामसिक भोजनसे बुद्धि सात्विक नहीं रह सकती। कहावत भी है **जैसा खाए अन्न, वैसा होवे मन, जैसा पीवे पानी, वैसी बोले वाणी।** वैज्ञानिक भी इस सत्यको स्वीकार करते हैं।

भोजनके सम्बन्धमें कहा गया है, जो अल्पाहारी होता है, वही दीर्घजीवी होता है। जो हिताहारी, मिताहारी, अल्पाहारी होता है, उसे कभी भी चिकित्साकी आवश्यकता नहीं होती है, वह स्वयं ही चिकित्सक है। मनुष्यको अपने जीवनमें धर्म, अर्थ और कामकी साधना करनी है। इसलिए स्वस्थ रहना आवश्यक है। स्थानांगमें दस प्रकारके सुखोंमें आरोग्यको पहला स्थान दिया है। चरकसंहितामें भी धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका मूल आरोग्यको ही माना है। बुद्धने भी कहा, आरोग्य ही सबसे बडी सम्पत्ति है। इसलिए समय पर संतुलित और सात्विक भोजन करना, यह योगियोंका गुण माना गया है।

शिक्षाका प्रारम्भ

यूनानके दार्शनिक सुकरातसे एक बहनने पूछा, बच्चेको पढ़ाना कबसे शुरू करूं ? तुम्हारा बच्चा कितने सालका है ? पाँच सालका । सुकरातने गम्भीर स्वरमें कहा बहन तुमने काफी विलम्ब कर दी । बच्चेको पढ़ाना तो तभी शुरू कर देना था, जब वह आपके गर्भमें था ?

मां के संस्कार गर्भावस्थासे ही शिशुमें संक्रात होने लगते हैं । मां का आहार विहार, विचार और व्यवहार गर्भस्थ शिशुको सर्वाधिक प्रभावित करते है । अतः प्राचीन ग्रन्थोंमें गर्भवती महिलाओंकी चर्याके जो निर्देश दिए गए हैं वे बहुत वैज्ञानिक हैं । उस समय मां जितनी अधिक संयत, सात्विक, शांत और प्रसन्न रहती है, उसकी भावी संतान उतनी ही प्रतिभा संपन्न, तेजस्वी और समर्थ होती है । महान् माता ही महान आत्माको आह्वान कर सकती है, अवतरित कर सकती है ।

निराश, हताश, क्रूर एवं विलासी मातायें कभी महान संततिको उत्पन्न नहीं कर सकती । कहते हैं बालक मांके पेटमें ही सीखने लगता है । गर्भावस्थामें एक कोमल नली द्वारा मां और बालकका संपर्क रहता है । मां सांस लेती है तो बालक भी सांस लेता है । मां खाती है, तो बालक भी खाता है । वाशिंगटन विज्ञानशालाके अध्यक्ष प्रोफेसर एलियट गेट्सने इस दिशामें अनेक प्रयोग किए है । उन्होंने कुछ व्यक्तियोंको शीशे पर सांस फेंकनेको कहा । फिर सांसके उन कणोंकी परीक्षासे ज्ञात हुआ कि उसमें ईर्ष्या, क्रोध, सुख दुःख आदि की प्रकृतियाँ मौजूद थी ।

जब मांके स्वास पर बच्चेका स्वास निर्भर करता है, तब वह सहज प्रमाणित हो जाता है कि जैसी मां होती है वैसा ही बालक ।

असुर कुलमें प्रह्लाद जैसे सत्वगुणी भक्तका जन्म हुआ इसके पीछे भी माँका ही हाथ है । जब प्रह्लाद माता कयाधुके गर्भमें पल रहे थे उस समय कयाधु देवर्षि नारदसे धर्मोपदेश एवं भगवद्गुणानुवाद निरन्तर श्रवण

करती थी । यही गुण बालक प्रह्लादके जीवनमें आ गया । ध्रुवके जीवनमें भी माता सुनीतिका प्रभाव पड़ा । नेपोलियन जब गर्भमें था, उसकी मां कई महिनों तक पतिके साथ युद्धमें रही । यही कारण था नेपोलियनमें बचपनसे ही वीरोचित गुण प्रकट होने लगे थे । जवानीमें उसकी वीरता और रण कौशलसे पूरा यूनान विस्मित था ।

प्रसिद्ध कवि राबर्ट वर्न्सको जन्मके साथ ही कई बड़ी बड़ी कविताएँ याद थी । जब उसने बोलना शुरु किया तब वह उन कविताओंको अस्खलित बोलता था । ज्ञात हुआ कि उसकी गर्भवती मां कंठस्थ कविताओंका रोज पारायण किया करती थी । विख्यात चित्रकार फेलेक्समेन जब गर्भमें था, उसकी मां चित्रकलामें अभिरुची रखती थी । फलतः पुत्र बेजोड़ चित्रकार बना ।

अभिमन्युकी चक्रब्यूह विद्याको आधुनिक विज्ञानका समर्थन प्राप्त है । महाभारतके अनुसार जब अर्जुन सुभद्राको युद्धके रहस्य समझा रहे थे, तब गर्भस्थ शिशु अभिमन्युने सुना और सीखा । अमेरिकाके वैज्ञानिकोंने गर्भस्थ शिशुकी श्रवण शक्तिका विश्लेषण कर स्वीकार किया है कि मानव शिशु जनमसे पहले सुनी हुई आवाजें/कविताएँ पहचान लेते हैं, सीख लेते हैं । इस दृष्टिसे देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि बच्चोंका शिक्षण जन्मसे पहले ही प्रारम्भ हो जाता है ।

ऐसा माना जाता है कि शिवाजीके व्यक्तित्त्वका निर्माण उनकी मांके द्वारा गर्भकालमें ही हुआ था । मांकी जैसी भावनाएं एवं वृत्तियाँ हैं वही शिशुमें पायी जाती हैं । जैन आगम भगवतीके अनुसार कुछ गर्भस्थ शिशुओंमें मेंटल प्रोजक्शन तथा प्रोजेक्शन आँफ एस्ट्रल बाँडीकी विलक्षण क्षमता होती है । इस अवस्थामें मांको अपने दायित्त्वके प्रति विशेष जागरूक होना आवश्यक होता है । क्योंकि शिशुके संस्कार बीजोंको पनपनेका वातावरण मां ही निर्मित करती है ।

बाल मनोविज्ञानके अनुसार गर्भाधानसे लेकर जन्मके पाँच वर्ष

पर्यन्त शिशुके निर्माणका समय बहुत ही मूल्यवान होता है। उस समय वह अपनी बुद्धि भावनाओं, इच्छाशक्ति तथा चरित्रके विकासकी दृष्टिसे आस पासके वातावरणसे जितना ग्रहण करता है, उतना पाँच वर्षसे जिंदगीके अंत तक नहीं कर सकता।

बच्चेके लिए चेतनाके विकास और आंतरिक रूपांतरणकी पहली मंजिल घरसे ही प्रारम्भ होती है। घरकी केन्द्र होती है मां। उसके कोमल सुघड़ हाथोंके संस्पर्शसे घरकी हर वस्तु संगीतमय हो सकती है। वह तभी सम्भव है, जब वह स्वयं संगीतमय हो उसका जीवन लयबद्ध हो, सजग हो उसे शांत और संतुलित रखकर ही वह बालकका सम्यक् संतुलित विकास कर सकती है।

मांका दायित्व है कि वह प्रारम्भसे ही बच्चोंको ऐसी स्वस्थ जीवनशैलीका प्रशिक्षण दे, जिससे उनमें सहज ही अच्छी आदतोंका निर्माण हो सके। उनमें नियमितता, श्रमशीलता, सहनशीलता, दक्षता और नम्रताका विकास हो।

यह भी सच है कि नारीको एक साथ अनेकानेक भूमिकाओंका निर्वहन करना होता है। वह किसी एकको भी गौण नहीं कर सकती। पर इतनी सारी जिम्मेदारियोंसे घिरी रहकर वह मांकी भूमिका जो कि उसकी असली भूमिका हैं, को उपेक्षित करती जा रही है। यह उपेक्षा न केवल उसके लिए अपितु समग्र मानवीय चेतनाके लिए भी महंगी पड़ रही है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्यमें बहुत आवश्यक है कि नारी अन्यान्य भूमिकाओंका वहन करती हुई भी मातृत्वकी भूमिकाको प्राथमिकता दे, उसे मजबूत बनाए। बच्चोंके सुकोमल मनकी धरती पर अच्छे संस्कारोंके बीज बोयें। संस्कारी बालक ही परिवार, समाज और राष्ट्रकी शोभा है। मानवताकी महक है।

गोमहिमा

गावो विश्वस्य मातरः गाय समस्त चराचर जगतकी माता है। गायमें सभी देवी देवताओंका वास है। अतः गायकी पूजा एवं सेवासे एक साथ सम्पूर्ण देवी देवताओंकी आराधना हो जाती है। गायकी महिमा अनन्त है। वेदोंसे लेकर पुराणोंतकमें उसकी महिमाका भूरि भूरि वर्णन मिलता है। गायके समान निष्पाप जीव इस धरतीपर और कोई नहीं है। इसीसे परम पवित्र पूजित गोमाताकी हर चीज पावन और पवित्र मानी जाती है।

आयुर्वेदके अनुसार गायके दूध, दही, घी, गोबर और मूत्रका एक निश्चित अनुपातमें मिश्रण करके पंचगव्य बनाया जाता है। इस पंचगव्यके सेवनसे अनेक लाभ हैं।

सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः। ऐसी विशद महिमा वेदोंमें गायी गयी है। वेदोंमें स्पष्ट बताया गया है कि प्रजापति और परमेष्ठी गायकी सींगमें, इन्द्र उसके सिरमें अग्निदेव उसके ललाटमें और यमदेव उसके गलेकी सन्धिमें रहते हैं। नक्षत्रराज चन्द्रदेव गायका मस्तिष्क, द्युलोक उसका ऊपरी जबड़ा और पृथ्वी उसका निचला जबड़ा है। विद्युत गायकी जीभ, मरुत देवता उसके दाँत, रेवती नक्षत्र गला, कृत्तिका कन्धा और ग्रीष्म ऋतु कन्धेकी हड्डी है। वायुदेव इसके समस्त अंग हैं। इसका लोक स्वर्ग है और पृष्ठवंशकी हड्डी रुद्र हैं, श्येन पक्षी(बाज) इसकी छाती, अन्तरिक्ष इसका बल, बृहस्पति इसका कूबड़, बृहती नामक छन्द इसकी छातीकी अस्थियाँ हैं। देवांगनाएँ इसकी पीठ और उनकी परिचारिकाएँ पसलीकी हड्डियाँ हैं। मित्र और वरुण देवता इसके कन्धे हैं। त्वष्टा और अर्यमा इसके हाथ हैं। महादेवजी इसकी भुजाएँ हैं। वायुदेव इसकी पूँछ और पवमान इसके समस्त रोएँ हैं। ब्राह्मण और क्षत्रिय इसके नितम्ब और बल जंघे हैं।

बैंठनेके वक्त गाय साक्षात् अग्निरूप है और उठते समय अश्विनीकुमार।

पूर्वमुख खड़े होनेपर प्रत्यक्ष इन्द्रदेव और दक्षिण मुँह खड़े होनेपर साक्षात् यमराज है। देखते समय यह मित्रदेवता है और पीठ फेरते वक्त आनन्ददेव है। हलमें जोतनेके समय इसका बैल विश्वेदेव और गाड़ीमें जोत दिये जानेपर साक्षात् प्रजापति है। जब यह खुली हुई खूँटसे बाहर स्वतन्त्र विचरती है तो उस समय गाय सब कुछ स्वतः बन जाती है। गायका यह दिव्य रूप वास्तवमें उसकी महिमा और महत्ताका मण्डन करता है। इसी प्रकारका विस्तृत वर्णन पद्मपुराण, भविष्यपुराण, ब्रह्माण्डपुराण, स्कन्दपुराण, महाभारत, बृहत्पराशरस्मृतिमें भी मिलता है।

महाभारतके अनुशासनपर्व, दानधर्मपर्व(५१/२६,३४) में महर्षि च्यवनने राजा नहुषसे कहा है मैं इस संसारमें गौओंके समान दूसरा कोई धन नहीं देखता। गोसेवा समस्त पापोंका नाशक है। वह विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती है तथा दुहनेपर अमृत देती है। गाय जहाँपर रहती है, वहाँके पापोंका वह नाश कर देती है। गौ समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली महादेवी है।

महाभारतके इसी पर्वमें भीष्मने युधिष्ठिरसे कहा है कि इनके गोबरसे लीपनेपर देवस्थान और पितरोंके श्राद्ध स्थान स्वतः पवित्र होते हैं। जो आदमी एक वर्षतक नियमित रूपसे प्रतिदिन स्वयं भोजन करनेसे पहले गायको एक मुट्ठी घास, अन्न, जल आदि खिलाता पिलाता है, उसका वह व्रत समस्त कामनाओंको परिपूर्ण करनेवाला होता है।

भविष्यपुराणमें उत्तरपर्वके ६९ वें अध्यायमें भगवान श्री कृष्णने महाराज युधिष्ठिरसे कहा है समुद्रमन्थनके समय क्षीरसागरसे पाँच गौएँ नन्दा, सुभद्रा, सुरभि, सुशीला और बहुला उत्पन्न हुई थीं। ये सभी गौएँ सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण करनेवाली कामधेनु कही गयी हैं।

गौओंसे प्राप्त दूध, दही, घी, गोबर, गोमूत्र और गोरोचन अति पवित्र हैं। ये प्राणियोंके सभी पापोंको नष्टकर उन्हें शुद्ध करनेवाले हैं। सर्वगुणसम्पन्न

बिल्ववृक्ष गौके गोबरसे ही उत्पन्न हुआ है। ब्राह्मण और गौ एक ही कुलके हैं। ब्राह्मणमें मन्त्रोंका निवास है और गायमें हविष्य स्थित है।

पद्मपुराणमें सृष्टिखण्डमें ब्रह्माजीने नारदजीको बताया है कि जो आदमी गायकी एक बार प्रदक्षिणा करके उसे सादर प्रणाम करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर स्वर्गका सुख पाता है। जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर गाय और उसके घृतका स्पर्शमात्र करता है, वह जटिल पापोंसे मुक्त हो जाता है।

अग्निपुराणमें इसकी विशद विवेचना है। भगवान धन्वन्तरि आचार्य सुश्रुतसे कहते हैं गोषडंग, महापाप, महारोग एवं महादुःखका निवारण करनेवाला है। गोसेवा, गोदान, गोरक्षा, गोकीर्तनसे मानव न केवल अपना, प्रत्युत अपने कुलका उद्धार कर लेता है। गायके श्रद्धापूर्वक स्पर्शमात्रसे भारी पापोंका नाश हो जाता है। यह पृथ्वी गौओंकी श्वाससे स्वतः स्वच्छ और पवित्र होती रहती है।

अग्निपुराणके अनुसार एक दिन गोमूत्र, गोमय, गोघृत गोदुग्ध, गोदधि, कुशोदकका सेवन एवं एक दिनका अखण्ड उपवास अति कुकर्मीको भी शुद्ध कर देता है। आर्यगण एवं देवता अपने समस्त पापोंका शमन करनेके लिये इसी अनुष्ठानका परिपालन करते थे। इनमेंसे प्रत्येक वस्तुका क्रमशः तीन-तीन दिन भक्षण करके रहा जाये तो उसे महासान्तपनव्रत कहते हैं। यह व्रत सम्पूर्ण कामनाओंको सिद्ध करनेवाला और समस्त पापोंको विनष्ट करनेवाला होता है।

केवल गायका दूध पीकर इक्कीस दिन रहनेसे कृच्छ्रातिकृच्छ्रव्रत होता है इस व्रतके अनुष्ठानसे मानव सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको प्राप्तकर पापमुक्त हो जाता है और उसे स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है।

तीन दिन गरम गोमूत्र, तीन दिन गरम गोघृत, तीन दिन गरम गोदुग्ध और तीन दिन केवल गरम वायु या जल पीकर रहनेवाला व्रत तप्तकृच्छ्रव्रत कहलाता है। यह व्रत समस्त पापोंका प्रशमन करनेवाला, अग्नितुल्य और ब्रह्मलोककी स्वतः प्राप्ति करानेवाला है।

यदि इन वस्तुओंको इसी क्रमसे शीतल करके सेवन किया जाय तो उसे शीतकृच्छ्रव्रत कहते हैं। यह ब्रह्मलोकप्रदायक व्रत है।

एक माहतक गोव्रती गोमूत्रसे प्रतिदिन स्नान करे, गोदुग्ध सेवन करे, गौओंकी सेवा करे और गौओंको भोजन करानेके बाद स्वयं भोजन ग्रहण करे। इससे व्रती निष्पाप होकर गोलोकको जाता है।

गोमतीविद्याका जप करनेसे बड़े बड़े पाप, सन्ताप, रोग, शोकका नाश हो जाता है। इसी कारण हमारे पूर्वज केवल गौओंकी सेवा करके दीर्घायु प्राप्त करते थे और अपने समस्त पापोंका शमन करते थे।

गोषडंग-गोदुग्ध, गोदधि, गोमय, गोघृत, गोमूत्र और गोरोचनका चिकित्सामें अत्यधिक उपयोग होता है। दही तासीरमें शीत, अग्निदीपक, स्निग्ध, कुछ कषाय, गुरु तथा विपाकमें अम्ल होता है। यह बलवीर्य बढ़ाता है। मूत्ररोग, विषमज्वर, अतिसार, अरुचि तथा दुर्बलता आदि रोगमें इसका सदुपयोग किया जाता है, जिससे पर्याप्त स्वास्थ्यलाभ होता है।

गोदुग्ध रस एवं विपाकमें मधुर, शीतल, स्निग्ध, गुरु और वृद्धावस्थाके समस्त रोगोंका शामक है। अतः यह सर्वदा सेवनीय है।

काली गौका दूध वातनाशक एवं अति गुणवान होता है। लाल गौका दूध वात पित्तनाशक होता है। श्वेत गायका दूध कफकारक तथा कुछ गुरु होता है। लाल और चितकबरी गायका दूध वातनाशक दवाके लिये मुफीद है। इसी प्रकार गायका धारोष्ण दुग्ध बलकारक, सुपाच्य अमृततुल्य, अग्निदीपक और त्रिदोषशामक होता है।

वैसे तो गोदुग्ध कभी भी पिया जाय तो लाभदायक ही होता है, पर प्रातःकालका गोदुग्ध पान वृषण, बृहण तथा अग्निदीपक होता है। दोपहरमें दिनमें पिया जानेवाला गायका दूध बलवर्धक, कप पित्तनाशक होता है। रात्रिमें गोदुग्धपान बच्चेके लिए बलवर्धक होता है। इससे दुर्बलता और बुढ़ापा दूर होता है। अतः गोदुग्ध प्रतिदिन पीनेसे दिन दूना लाभ होता है।

गायका घृत विशेषतः आँखोंके लिये फायदेमन्द होता है। यह वृषम, अग्नि उद्दीपक, रस एवं विपाकमें मधुर, शीतल तथा त्रिदोषशामक है। बुद्धि, कान्ति, चमक, ओज तथा तेजकारक गोघृत दरिद्रता दुर्बलता और भूत प्रेतबाधाको दूर करता है।

भावप्रकाश निघण्टुके अनुसार गोघृत गुरु, बुद्धिवर्धक, बलदायक, पवित्र रसायन, सुगन्धित एवं कान्तिदीपक होता है। आयुर्वेदमे वर्णित हिंग्वादिघृत, पंचगव्यघृत, पंचकोलादि घृत आदिका विभिन्न व्याधियोंमें प्रयोग करनेसे रोगी स्वास्थ्यलाभ करता है।

गायका गोबर, कटु, उष्ण, वीर्यवर्धक, त्रिदोषनाशक, कुष्ठघ्न, रक्तशोधक, विषनाशक, श्वासरोगमें बहुत आराम देता है। विषोंमें गायके गोबर स्वरसका लेप एवं अंजन भी किया जाता है।

गोमूत्र कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, खारा, तिक्त, कषाय, लघु, अग्निदीपक, बुद्धिवर्धक, पित्तकारक, नेत्र, मुख, वात, वस्ति, शूल, श्वास, कुष्ठ, खाँसी, पाण्डुरोगमें बहुत लाभ पहुँचाता है।

भावप्रकाशके अनुसार गोमूत्रके सेवनसे शरीरकी परिशुद्धि होती है। यह विषोंका नाश करनेवाला है। गोमूत्र पापक्षयकारक है। जहाँपर गोमूत्र उपलब्ध न हो, वहाँ गोमूत्रका अर्क ही प्रयोगमें लाभदायक है। गोमूत्रासव प्रबोधरजन आदि दवाओंका निर्माण गोमूत्रसे किया जाता है।

गोमूत्रमें कार्बोलिक एसिड होनेसे उसकी स्वच्छता और शुद्धता बहुत बढ़ जाती है। गोमूत्रमें पास्फेट, पोटेशियम, नाइट्रोजन, यूरिया, यूरिक एसिड आदि पाये जाते हैं।

जिन महीनोंमें गाय दूध देती है, उसके मूत्रमें लेक्टोड विद्यमान रहता है, जो हृदय और मस्तिष्कके रोगोंमें आशातीत लाभ पहुँचाता है।

आठ माहकी गर्भवती गायके मूत्रमें पाचक रस बहुत अधिक रहता है। जिस प्रकार महामृत्युंजय मन्त्र सर्वलाभदायक और सर्वारिष्टनाशक होता है,

ठीक उसी तरह गोमूत्र भी सभी रोगोंका शमन करनेमें समर्थ है। इसी प्रकार गोरोचन भी रसमें पित्त, वीर्यमें शीत, मंगलकारी, कान्तिदाय, दु:खदरिद्रहर्ता, विषनाशक, ग्रहदोषनिवारक, उन्मादहारी, रक्तशोधक, गर्भस्त्रावदोषमें अति लाभदायक होता है। बच्चोंके श्वासरोगकी रामबाण दवा है गोमूत्र।

इस प्रकार गोमाताके महिमाकारी गुण महान और अद्भुत हैं। अत: सबको अपने तन, मन, धनसे गायकी सेवा और रक्षा करनी चाहिये। गोसेवा अश्वमेधयज्ञके समान महिमायुक्त और पुण्यदायक है।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिकाके आजीवन सदस्योंके लिए महत्त्वपूर्ण सूचना

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिकाके सभी सदस्य एवं पाठकवृन्दोंको ज्ञात हो कि ई. 2006 में सभीको सूचना दी गई थी कि आजोपरान्त-अर्थात् 2006 से पत्रिकाके आजीवन सदस्यताका मतलब 15 वर्षीय सदस्यता होगी। पूर्वमें जिन-जिन सुन्दरसाथजीने आजीवन सदस्यता प्राप्त कर ली थी उनकी भी 15 वर्षकी कर दी गई थी। अत: 2006 में आजीवन सदस्यता प्राप्त करनेवालोंकी सदस्यता 2021 में पूर्ण हो गई है।

इसलिए सभी 15 वर्षीय सदस्यकोंको यह सूचना दी जाती है कि ₹ 1500/- का प्रदान करके अपनी 15 वर्षीय सदस्यताको नवीनीकृत करें। आपकी सदस्यताका रकम इसी वर्ष 31 मार्च 2022 तक प्राप्त नहीं हुआ तो - न चाहते हुए भी आपको अप्रैलसे पत्रिका नहीं भेज सकते।

निम्नलिखित बैंक खातेमें अपनी 15 वर्षीय सदस्यता शुल्क जमा करवा कर कार्यालयमें सूचित कर दें,

संपर्क - **Mobile / ws - 8511226600, 760080069**
Account Name : **"Pranami Dharma Patrika"**
Bank Name : Bank Of India,
Account Number. : **325010100026614**
IFSC: BKID0003250, Branch : Ranjit Road, Jamnagar

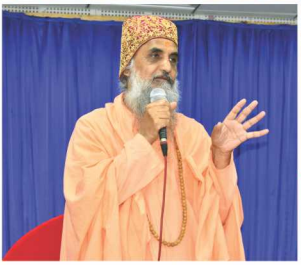
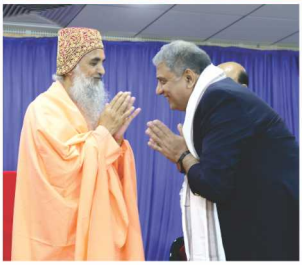

श्री ५ नवतनपुरी धाममें सुप्रसिद्ध नाडीवैद्य डॉ. राजेश वर्माका
नाडी परीक्षण केम्पका आयोजन ।

धर्मशाला, हिमालचलके सुप्रसिद्ध सन्त स्वामी प्रकाशानन्दजीका श्री ५ नवतनपुरीधाम आगमन पर स्वागत ।

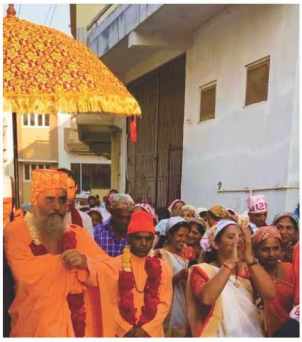
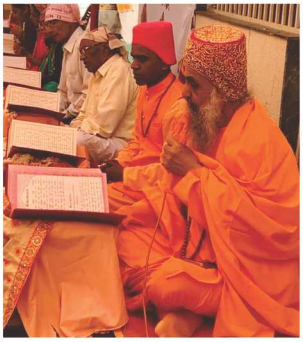

श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर सीमरडाका वार्षिकोत्सव ।

२ समर्पण हस्पिटलमें अत्याधुनिक मशीनोंका संस्थापन एवं जामनगर स्मशान भूमिमें नटराजकी मूर्ति कालचक्रका लोकार्पण ।